समकालीन हिन्दी कविताओं में पर्यावरण

डॉ सजिना. पी. एस.
असिस्टेंट प्रोफेसर युनिवर्सिटी कॉलेज
तिरुवनंतपुरम केरल मो.-7025527422

शोधसार:- हमारे जीवन में पर्यावरण का महत्वपूर्ण स्थान है। पर्यावरण से हमें शुद्ध हवा, पानी, रहने के लिए भूमि सब कुछ मिलता है। प्रगति के नाम पर मनुष्य प्रकृति का लगातार विनाश करता जा रहा है। प्रकृति का अमर्यादित उपभोग, वनों की कटाई, उद्योग-धंधों की भरमार, उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन, व्यापार, बाजार और इसी प्रकार का एक परिवेश बनता जा रहा है जो प्रकृति, पर्यावरण, पृथ्वी और मानव जाति के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहा है। समकालीन हिन्दी कविता में पर्यावरण को बचाने की चिंता प्रमुख है। समकालीन कविता प्राकृतिक चित्रण के साथ-साथ प्रकृति के विनाश के कारणों की भी पड़ताल करती है।

बीज शब्द:- पर्यावरण, प्रकृति, , ग्लोबल वार्मिंग, प्रदूषण, उत्सर्जन, विकसित और विकासशील देश, भूमंडलीकरण।

प्रस्तावना:- पर्यावरण शब्द अत्यंत व्यापक है, जिसमें सारा ब्रह्मांड ही समा जाता है। 'हम सभी और हमारा संसार के समस्त तत्वों एवं पदार्थों का समग्र रूप ही पर्यावरण है। अर्थात् चारों ओर से हम जो कुछ देखते और अनुभव करते हैं. वह पर्यावरण का हिस्सा है। यही हमारा अस्तित्व का आधार है। इसलिए पर्यावरण को बनाये रखना हमारी आवश्यक है और कर्तव्य भी।

मूल लेख:-पर्यावरण आज एक बहुआयामी शब्द है। आज पर्यावरण की समस्या सबसे अधिक चर्चित समस्या में एक है। हिंदी साहित्य में विशेष रुप से समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरण का नया रूप उभर कर आ रहा है। समकालीन कविता विचारों के गहरे – दवाबों से विवश होकर रची जाती है। यहां महामानव और लघु मानव की बहस को समाप्त करता हुआ सामान्य मानव केंद्र में आ गया है। वस्तुतः हर युग की कविता अपने युग के मानव को परिभाषित करने की कोशिश करती है। इसलिए कविता का सृजन कर्म में निरंतर परिस्थितियों के घात – परिघात से बदलती हुई मनोस्थिति का अध्ययन आवश्यक है व्यापक अर्थ में कह सकते हैं की परिवेश ही समकालीन काव्य सर्जना की मूल प्रेरणा है।

भूमण्डलीकरण के इस युग में कविता इन परिस्थितियों से उत्पन्न तनावों को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन में छिपी विसंगतियों और विषमताओं के प्रति हमें भावनात्मक दृष्टि से सजग करती हुई सहानुभूति या संवेदना का दायरा बढ़ाती है।"1 समकालीन कविता में पर्यावरण की चिंता की यदि बात करते हैं तो यह चिंता हमें 'अज्ञेय' के काव्य से समझना आवश्यक है। अज्ञेय की कविता का अर्थ शायद उस मछली में है जिसे सभी दिशाओं से सागर घेरता है। मछली अर्थात अस्तित्व या जिजीविषा जल बाहर निकाल दी गई मछली, तड़पती छटपटाती और हॉफती है। क्या चाहती है वह जीना, मुक्ति। यही अज्ञेय की कविता की सही जमीन है।[2]

नागार्जुन की कविता 'धरती' में प्रकृति और परिवेश के ऊपर मनुष्य का तीव्र शोषण का चित्रण है। उत्तर आधुनिक जरूरतों की पूर्ति के नाम पर अमेरिका धर्म नवीकरण से, बेसहारों की सहायता, साम्राज्यवाद आदि अनेक कर्मकांड चलाता है, जिसके द्वारा यह संसार भर के छोटे मोटे विकासशील राष्ट्रों पर अपना अधिकार जमाने की कोशिश करता रहता है इसके लिए आधुनिक युग में पर्यावरण का प्रदूषण अधिक हो गया है। मानव के अपने इतिहास से पनपकर पली हुई परिस्थिति और परिस्थिति दर्शन आज तिरस्कृत होने लगे हैं उस कविता के द्वारा नागार्जुन प्रकृति और मनुष्य के संबंध के बारे में एक अलग दृष्टिकोण से अपनी राय प्रकट करते हैं। हमारी प्राचीन सभ्यता वसुंधरा को माता की संज्ञा देती है।दोहन और पोषण का भाव लुप्त हो गया है। हम मानव भौतिकवादी बन गए हैं। आविष्कार के क्षेत्र में मानव कल्याण का साधन मात्र नहीं बने हैं, जाति के सर्वनाश का भी कारण बन सकते हैं। हम प्रगति की आंधी दौड़ में वसुंधरा को भूलते हैं।इस भाव को कवि इस प्रकार आत्मसात करते हैं-

धरती धरती है,/पनहाई हुई गाय नहीं
कि चट से दुह लो कंटिया भर दूत [3]

"नागार्जुन ने इस धरती को विनाशक वैज्ञानिक अस्त्रों से बचाने की इच्छा व्यक्त की है। युद्धों का विरोध करते हुए वे लिखते हैं-

पौधों या पेड़ों में कभी नहीं फली हैं
छुटियाँ /कन्द की जड़ से कभी नहीं निकला है
विस्फोटक बम/चर कर घास गाय ने दूध के बदले नहीं
दिया इलाइल/सोख कर इस धरती का जहर नहीं बरसा
कमी भी बादल। [4]

वैश्वीकरण के परिदृश्य में लिखी गई केदारनाथ सिंह की रचना है 'पानी की प्रार्थना ' यह प्रमाणित करती है कि प्राकृतिक दोहन का खमियाजा इस धरती के सभी प्राणियों को भुगतना है। प्रकृति और मानव जीवन इसी प्रकार जुड़े गए हैं कि एक को दूसरे से अलग करना संभव नहीं है। इसमें निहित पारिस्थितिक बोध आज की उपभोक्ता प्रणाली के विरुद्ध कवियों की शंखध्वनि है –

"अंत में प्रभु/अंतिम लेकिन सबसे जरूरी बात
वहाँ होंगे मेरे भाई बंधु
मंगल ग्रह या चाँद पर/पर यहाँ पृथ्वी पर मै
यानी आपका मुँहलगा यह पानी

अब दुर्लभ होने के कगार तक/पहुँच चुका है" [5]

लीलाधर जगूड़ी की कविता उस दिन का जंगल मैं प्रीति को तथा बिम्बों के सहारे कवि ने अतिरिक्त एवं वर्तमान को सात साथ उपस्थित किया है। पुराना कभी पुराना नहीं होता, वह हर नए को जन्म देता है। इसमें अतीत का पतझर है जिसकी पत्तियाँ आज भी झड़ती जा रही है वह एकदम सुखमय था। उसमें हताशा नहीं थी, रौशनी थी। कविता के कई बिम्ब में है जो मनोभावों को दर्शाते हैं-

पिछले पतझर में/हम कितने रोशन थे
जैसे उजाले के दो पेड़/ घास बड़ी होती है
तो आपस में दोस्त हो जाती है।[6]

इस कविता में संबंधों की टूटन है ।पेड़ की तुलना में घास अधिक श्रेयस्कर है क्योंकि वह मिलजुल कर रहना जानती है। वह धरती से ऊर्जा लेकर उसी पर रहना चाहती है। यहाँ घास निम्न मध्यवर्गीय जीवनशैली का भी प्रतीक है। घास की तुलना में पेड़े होकर जमीनी यथार्थ से दर चले जाते हैं अपने अकेलापन में उलझे हुए मनुष्य की भाँति उनकी नियति हो जाती है। यहाँ पेड़ को आभिजात्य एवं आधुनिकता में डूबे हुए मनुष्य का प्रतीक माना जाता है ।अरुण कमल की कविता 'गंगा को प्यार 'भारतीय मनुष्य और गंगा के आत्मीय, अंतरंग एवं शुद्ध संबंधों की पवित्र गाथा है। गंगा के बिना भारतीय जीवन तथा संस्कार की कल्पना भी असंभव है ।गंगा जीवन का आधार और प्राण है। यह कविता केवल पर्यावरण की बाह्य चिंताओं का प्रतिफल नहीं बल्कि कृतज्ञता बोध की विनम्र अभिव्यक्ति है। साथ ही वर्तमान की विभीषिकाओं को भी रेखांकित करती है ।गंगा में प्यास बुझाने के लिए पक्षी आते ही हैं। वे गंगा के जल की सतह को अपने वक्ष से स्पर्श करते हैं परंतु पानी में चौच नहीं डालते और घूम जाते हैं, क्यों? गंगा का पानी उन्हें पीने लायक नहीं लगता। अर्थात् गंगा का प्रदूषण इतना मुखर है कि उसे जानने के लिए गंगा के पानी को छूने या पीने की जरूरत नहीं है, सिर्फ देखने से ही उसकी प्रतीति हो जाती है। गंगा का प्रदूषण जैसे मुंह बोलता है। इसी कविता में एक और प्रसंग है कि एक गाय रुक-रुककर, संभल संभलकर पैर रखती है, जल पीने के लिए गंगा की धार तक उत्तरती है। उसकी सांस से गंगा पानी हिल जाता है। शायद इसीलिए कि गंगा अपने पानी को हिलाकर उस गाय को निषेध कर रही है कि वह पानी न पिये। यह सब देखकर कवि आश्चर्यचकित हो सोचता है कि क्या गंगा इतनी प्रदूषित हो सकती है- "कभी-कभी कोई पक्षी जल की सतह को लगभग छाती से छूता नि शब्द/ मुडता है वापस, कोई गाय, संभलकर पांव टिकाती उतरी जल पीने और नथुनों के नीचे/ हिल गई गंगा! असंभव असंभव है सोचना-जिनकी मिट्टी हवा-पानी से गुंथी है।उनके लिए असंभव है सोचना कि एक दिन गंगा के ऊपर उड़ता हुआ पक्षी विष की धाह से झुलस जायेगा। गंगा में यह प्रदूषण मनुष्य द्वारा फैलाया गया है। ऐसा करते हुए उन्होंने इसके परिणाम के बारे में नहीं सोचा।

ज्ञानेन्द्रपति की कविता है- 'नदी और साबुन '। कवि कहते हैं कि यह कैसीविडम्बना है कि जो साबुन कपड़ों के मैल को दूर करता है वही गंगा के जल को प्रदूषित करता है। यह साबुन की बही साबुत है. इसका रैपर हटा दिया गया है। यह जल में डुबी घाट की सीढ़ी से ऊपर सूखी सीढ़ी पर रखी है, रंग इसका नीला है। इस साबुन की बट्टी को एक बहुराष्ट्रीय कंपनी ने बनाया है. इसके लिए बहुत प्रचार भी किया है। कवि कहते हैं कि यह कैसी विचित्र माया है कि हथेली भर के साबुन की चौकोर काया की इतनी लंबी छाया है अर्थात् वह साबुन की टिकिया इतनी दर तक अपना प्रभाव छोड़े हुए है- **"माया है कि तरहथ भर की उसेकी चौकोर निश्चल काया की बहुत लंबी छाया है। गंगा के सिरहाने है हिमालय-शुभ्रता और उज्ज्वलता का प्रतिमान। उस शुभ्रता से निःसृत गंगा को एक हथेली भर की टिकिया ने नीला कर दिया। शुभ्रता धरी रह गई, विषैला नीलापन प्रमुख हो गया। इस साबुन का निर्माता भी मनुष्य है और साबुन से कपड़े धोने वाला भी, उद्योग लगाने वाला भी और उद्योगों का निस्सरण जल में छोड़ने वाला भी मनुष्य है, तो गंगा को प्रदूषित करने वाला भी मनुष्य ही हुआ। गंगा के प्रति कवि की यह चिंता प्रकारांतर से मनुष्य के लिए की गई चिंता है। अंतत गंगा का जल मनुष्य के लिए ही तो है। गंगा का जल केवल जीवों के प्यास को ही नहीं बुझाती, भीतर की गहरी 'संस्कारों की प्यास' को भी तृप्त करती है। निर्मला पुतुल 'बूढी पृथ्वी का दुख' कविता में लिखती हैं- "इस घाट अपने कपड़े और मवेशियां धोते सोचा है कभी कि उस घाट/पी रहा होगा कोई प्यासा पानी या कोई स्त्री चढ़ा रही होगी किसी देवता को अर्धय."** [7]

निष्कर्ष:-समकालीन दौर में पर्यावरण असंतुलन की समस्या सम्पूर्ण विश्व की अर्थात वैश्विक स्तर की समस्या है। इसके समाधान के लिए विश्व में विभिन्न स्तरों से कार्य चल रहा है। हिंदी साहित्य के माध्यम से मनुष्य के जीवन में पर्यावरण की भूमिका को निर्दिष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है। समकालीन कवियों ने पर्यावरण से सम्बन्धित विविध पक्षों को उद्घाटित किया है।मनुष्य और पर्यावरण के भावनात्मक सम्बन्ध को भी समकालीन कवियों के द्वारा रेखांकित किया गया है।इस प्रकार समकालीन कविता के सभी महत्वपूर्ण कवियों ने किसी न किसी रूप में पर्यावरणीय चिंताओं पर केन्द्रित कविताएँ लिखी है। समकालीन कविता का सरोकार केवल मानव तक ही सीमित नहीं है, उसकी परिधि में समय प्रकृति समाहित है। मानव इन तत्वों के संतुलन में विकृति पैदा कर रहा है। अतः समकालीन कविता का सरोकार पर्यावरण विकृति और उसके परिणाम भी है। यही समकालीन हिंदी कविता को हिंदी काव्य धारा में अपनी अलग से पहचान बनाती दिखलाई पड़ती है।

****

संदर्भ:-

1.बलवेय वंशी समकालीन कविताः विचार कविता में (डॉ. चन्द्रकांत बांदिवडेकर का लेख), पराग प्रकाशन, दिल्ली, पृ.144
2. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी समकालीन कविता. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.09
3.अज्ञेय पारिस्थितिक पाठ और हिंदी कविता, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ.93
4. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी समकालीन कविता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.84
5. केदारनाथ सिंह पारिस्थितिक पाठ और हिंदी कविता, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ.99
6.वहीं, पृ.106
7. निर्मला पुतुल 'नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द' (कविता संग्रह), तीसरा संस्करण-2012, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृ.31